पाठ का नाम : साहित्य की प्रमुख विधाओं का सामान्य परिचय
(उपन्यास, कहानी, निबंध)
हिंदी (ऑनर्स)

लेखक : डॉ. रमा
एसोसिएट प्रोफेसर
हिंदी विभाग
हंसराज महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय

विषय प्रवेश
उपन्यास
उपन्यास के तत्त्व
कहानी
कहानी के तत्त्व
उपन्यास और कहानी में अंतर
निबंध
निबंध के प्रकार
निबंध के तत्त्व
निबंध का महत्व एवं उद्देश्य
निबंध का विकास
विचारप्रधान निबंध
ललित निबंध
व्यंग्य निबंध
स्व-मूल्यांकन प्रश्नमाला
सन्दर्भ-सूची

- **विषय प्रवेश**

उपन्यास और कहानी के रूप में कथा साहित्य तथा निबंध के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन-विश्लेषण ही इस पाठ का अभीष्ट है। इसमें उपन्यास और कहानी के स्वरुप, तत्त्व, महत्व आदि के साथ-साथ दोनों की पारस्परिकता का परीक्षण तो किया ही गया है, साथ ही निबंध के विभिन्न प्रकारों तथा शैलियों आदि की जानकारी प्रस्तुत करने की कोशिश भी की गयी है। उपरोक्त तीनों साहित्यिक विधाएं अपेक्षाकृत नयी होते हुए भी अत्यंत ही लोकप्रिय एवं प्रभावशाली हैं। इन तीनों विधाओं का हिंदी साहित्य साहित्य में योगदान एवं उसके विकास पर भी एक दृष्टि डाली गयी है।

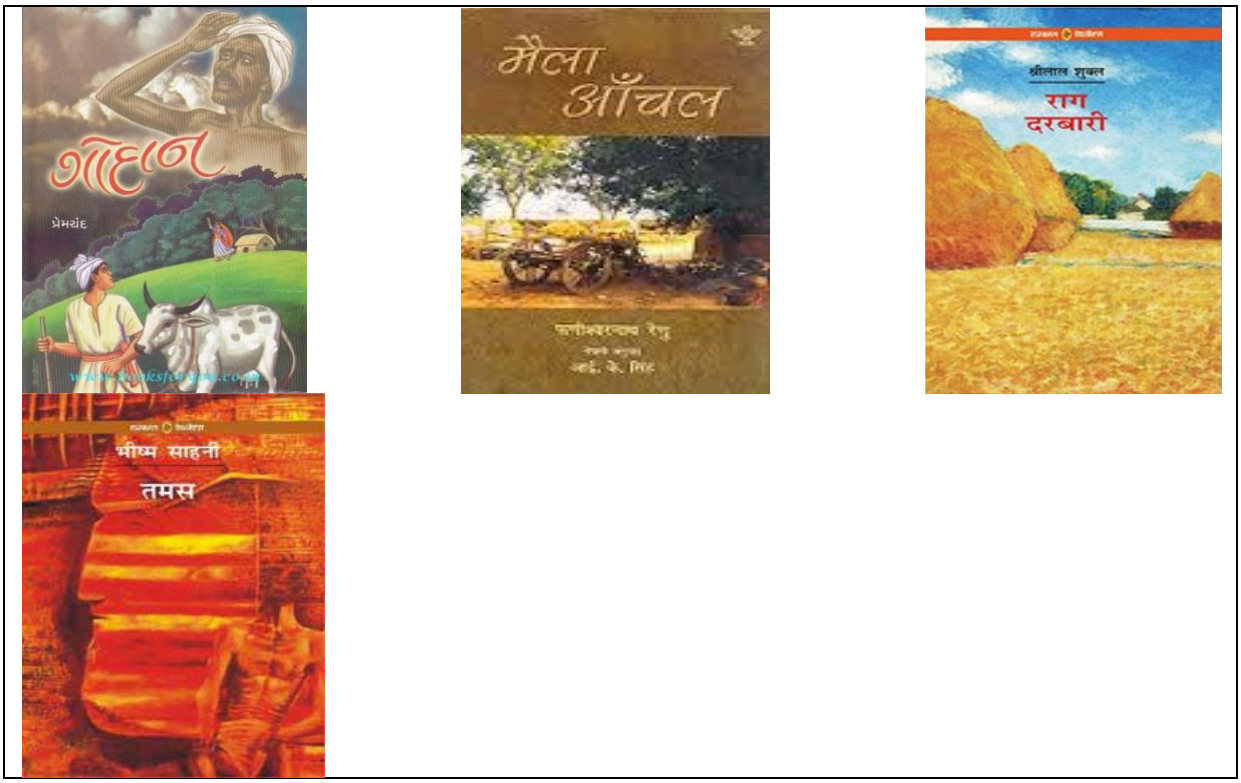

- **उपन्यास**

साहित्य सर्वदा मनुष्य एवं उसके बदलते परिवेश को पहचानने का प्रयत्न करता है। उपन्यास भी इसी प्रकार की एक आधुनिक श्रव्य साहित्यिक विधा है, जो मुख्यतः पश्चिमी साहित्य की देन है। यह आधुनिक युग की चेतना को वहन करने में अन्य विधाओं की तुलना में सर्वाधिक सक्षम है। इसीलिए वर्तमान युग में नवीनतर साहित्यिक विधा होते हुए भी सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रभावशाली माना जाता है।

उपन्यास शब्द का अर्थ है - पास में न्यस्त (रखा हुआ)। अंग्रेजी में नयी विधा के प्रचलन के कारण इसका नाम नॉवेल (नया) पड़ गया और अधिकतर भाषाओँ में यही प्रचलित है। संभवतः जीवन की यथार्तता और जीवन गाथा को पास यानि निकट से प्रस्तुत करने के कारण ही हिंदी आदि कुछ आधुनिक भाषाओँ में इसका नाम उपन्यास प्रचलित हो गया। अतः उपन्यास से तात्पर्य वह दीर्घ आकार गद्यात्मक कथा-प्रबंध है जिसमें जीवन की परिस्थितियों, प्रसंगों एवं घटनाओं का यथासंभव सजीव कथात्मक रोचक वर्णन किया जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो उपन्यास गद्य-प्रबंध का एक प्रधान रूप है जिसमें किसी चरित्र का देशकाल में स्वाभाविक चित्रण किया जाता है। वर्णन, चरित्र-विश्लेषण और वार्तालाप के द्वारा लेखक हमें देखे, सुने और अनुभूत जीवन के दृश्यों के साथ सजीव जीते-जागते व्यक्तियों की वास्तविक झाँकी दिखलाता है। यह आधुनिक गद्य का एक महत्वपूर्ण रूप है।

विभिन्न प्रकार की जटिल परिस्थितियों के भीतर से चरित्र को उभारकर प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगत करना ही उपन्यास की बुनियादी विशेषता है। इसलिए प्रेमचंद ने उपन्यास की परिभाषा देते हुए यह माना है कि –

"मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र समझता हूँ, मानव चरित्र पर प्रकाश डालना ही उपन्यास का मूल है।"

कथाकार जैनेन्द्र कुमार भी उपन्यास को जीवन की अभिव्यक्ति मानते हैं। उनके अनुसार –

"आज के जीवन की अभिव्यक्ति का सङ्ग्रा माध्यम उपन्यास है।"

अज्ञेय व्यक्ति जीवन की ईमानदारी से और रागद्वेष से पृथक रहकर किया गया वस्तुगत चित्रण ही उपन्यास का उद्देश्य मानते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक विद्वानों ने उपन्यास की भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ की हैं। डॉ. श्याम सुन्दर दास के अनुसार –

"मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा को उपन्यास कहते हैं।"

वहीं बाबू गुलाब राय का मत है कि –

"उपन्यास कार्य-कारण श्रृंखला में बंधा हुआ वह गद्य-कथानक है जिसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा पेचीदगी के साथ वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों से सम्बंधित वास्तविक एवं काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव-जीवन के सत्य का रसात्मक रूप से उद्घाटन किया जाता है।"

कोई भी विधा एक विकसित कला-कुसुम की भांति है, उसके तत्वों को अलग-अलग करना फूल की पंखुरियों को अलग-अलग करके देखना है। जिस प्रकार मनुष्य की बनावट के ज्ञान के लिए उसके शरीर-ज्ञान की आवश्यकता होती है। उसी प्रकार उपन्यास की पूरी जानकारी के लिए **'एनाटॉमी ऑफ़ नॉवेल'** अर्थात उपन्यास के शरीर विज्ञान की जानकारी आवश्यक है। थोड़े बहुत मतभेद के साथ उपन्यास की रचना करने वाले मुख्य तत्वों की संख्या छह मानी गयी है – कथावस्तु, पात्र अथवा चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, देशकाल और वातावरण, भाषा-शैली एवं उद्देश्य।

उपरोक्त तत्वों की प्रधानता के आधार पर उपन्यास के भेद भी किए जाते हैं। इस आधार पर घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान, शैलीप्रधान – ये तीन भेद किए जाते हैं। उद्देश्य की दृष्टि से आदर्शवादी, यथार्थवादी और फिर आगे प्रगतिवादी, गांधीवादी, समाजवादी, मार्क्सवादी आदि भेद किए जाते हैं। कथावस्तु के आधार पर देखें तो ऐतिहासिक और काल्पनिक, दो भेद किए जाते हैं और इनमें भी प्रत्येक के सामाजिक और अद्भुत, विचित्र या अय्यारी, जासूसी, तिलिस्मी आदि भेद हैं। शैली की दृष्टि से भी अनेक भेद किए जाते हैं जिनमें आत्मचारित्रिक शैली या आख्यान शैली, वर्णन शैली या कथा शैली, नाटकीय या आलाप शैली, और मिश्र शैली है। इसके अतिरिक्त प्रतीक शैली, विश्लेषणात्मक शैली, आवेश शैली, अलंकृत शैली, व्यंग्य शैली भी प्रचलित हैं।

क्या आप जानते हैं ?

हिंदी का उपन्यास संस्कृत के 'हितोपदेश' और 'पंचतंत्र' की उपदेशात्मक शैली से आरम्भ होकर तिलस्म, ऐयारी और जासूसी उपन्यासों द्वारा मनुष्य की कौतूहल-बुद्धि को जाग्रत करता हुआ ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनैतिक घटनाओं और समस्याओं के चित्रण पर आया और उनमें उन्हीं समस्याओं के सहारे चरित्र-चित्रण की रूचि और बढ़ी। राजनीतिक में उसने गांधीवाद और मार्क्सवाद दोनों ही पक्ष लिए। अब वह व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक चित्रण की ओर भी बढ़ गया है।

- **उपन्यास के तत्व**

कथावस्तु

संपूर्ण उपन्यास की कहानी जिन उपकरणों से मिलकर बनती है वे कथावस्तु कहलाते हैं। यह उपन्यास की आधारभूत सामग्री है जो लेखक अपनी आवश्यकतानुसार विस्तृत जीवन क्षेत्र से चुनता है। इसके चुनाव में लेखक के लिए पहली आवश्यकता यही होती है कि वे जीवन के ऐसे मार्मिक एवं रोचक प्रसंगों, घटनाओं और परिस्थितियों का चयन करे जो रुचिकर और प्रेरणाप्रद हो। यथार्थ जीवन से कथावस्तु को चुने जाने के कारण उपन्यासकार को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह कपोलकल्पित न लगे तथा उसमें विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता की पुष्टि हो। कथानक ही उपन्यास की वह पूरी प्रक्रिया है जिस पर उपन्यास की विशेषता निर्भर करती है।

कथानक चाहे जहाँ से भी ग्रहण किया जा सकता है – इतिहास, पुराण, जीवनी, अनुश्रुति, विज्ञान, राजनीति इत्यादि। लेकिन उपन्यासकार का प्रथम कर्त्तव्य यह है कि वह अपनी कथावस्तु का निरुपण करते समय जीवन के प्रति सच्चा और ईमानदार हो अर्थात उसकी कृति में मानव-जीवन और मानव स्वभाव का सच्चा चित्र प्रस्तुत किया जाना चाहिए। सार्वभौमता उसका अनिवार्य गुण है। जब तक वह मानव-जीवन के संघर्षों, उसकी कामनाओं और आकांक्षाओं, उसके राग-द्वेषों, अभावों आदि का चित्रण नहीं करेगा, तब तक उसकी कृति का महत्व नहीं होगा। आभिजात्य कुलों और संपन्न परिवारों का जीवन ही सघन, घटना-संकुल, संघर्षशील और नैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं होता, गरीब, साधारण व्यक्तियों के जीवन में भी ये सब बातें पायी जाती हैं, अतः उपन्यास का विषय साधारण व्यक्ति और उनका जीवन भी हो सकता है; उपन्यासकार के लिए कथावस्तु चुनने की एकमात्र कसौटी यह है कि वह जीवन को समग्र और स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत करे।

कथा-प्रसंग चयन के बाद लेखक को चाहिए कि वह अपनी कथा-सामग्री को क्रमबद्ध, सुसंबद्ध रूप में सुनियोजित करे। कथा-नियोजन इस प्रकार होनी चाहिए कि पाठक की उत्सुकता और जिज्ञासा आरम्भ से लेकर अंत तक बनी रहे। कथा सूत्रबद्ध होनी चाहिए तथा सभी प्रासंगिक और अवांतर कथाएँ मुख्य कथा से जुड़ी होनी चाहिए। कथानक में तीन गुणों का होना आवश्यक है – रोचकता, संभाव्यता और मौलिकता। इस तरह कहा जा सकता है कि कथानक रोचक, सुसंबद्ध, गतिशील, उत्साहवर्धक, मौलिक तथा स्वाभाविक जीवन वृत्तियों से पूर्ण होना चाहिए।

चित्र : फणीश्वर नाथ रेणु

साभार :
https://www.google.co.in/search?q=godaan&biw=1024&bih=673&tbm=isch&source=lnms&sa=X&ei=3CLYVM7sKoPTmAWv1oK4Aw&ved=0CAYQ_AUoAQ#tbm=isch&q=%E0%A4%AB%E0%A4%A3%E0%A5%80%E0%A4%B6%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%B0+%E0%A4%A8%E0%A4%BE%E0%A4%A5+%E0%A4%B0%E0%A5%87%E0%A4%A3%E0%A5%81&imgdii=_&imgrc=7UUIM-8UtgGQYM%253A%3BxXRKAzY3OuWCpM%3Bhttp%253A%252F%252F2.bp.blogspot.com%252F-NQgmnO4kDPw%252FTwWOSLPRMtI%252FAAAAAAAAABY%252F5bVydwR9mMc%252Fs1600%252Frenu.jpg%3Bhttp%253A%252F%252Fsaahityakaarhamaare.blogspot.com%252F2012%252F01%252Fblog-post_9068.html%3B193%3B258

पात्र अथवा चरित्र-चित्रण

उपन्यास में पात्र वह मूलशक्ति है जिसके सहारे जीवन यथार्थ या परिस्थितियों का ब्यौरा दिया जाता है। अर्थात उपन्यास के भीतर परिस्थितियों को धारण करने वाला पात्र कहलाता है। पात्र जितने सजीव और यथार्थ जीवन से सम्बद्ध होंगे, उपन्यास उतना ही आकर्षक होगा। अतः जहाँ तक संभव हो सके सभी पात्रों का सजीव चरित्र-चित्रण होना चाहिए। पात्रों के कार्यों और विचारों का पाठक

के मानस पटल पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ना चाहिए। उपन्यासकार की महानता इसी बात पर निर्भर करती है कि उसके पात्र कितने समय तक पाठक के स्मृति पटल पर अंकित रहते हैं, तथा उसकी भावना को किस हद तक प्रभावित करते हैं। वे पात्र जो देशकाल की सीमा पार कर पाठकों के चित्त में स्थायी रूप से बस जाते हैं, अमर पत्र कहलाते हैं, जैसे – हैमलेट, सूरदास, होरी आदि। उपन्यासकार की महानता की एक कसौटी यह भी है कि वह अपनी कृतियों में चरित्र को कितनी विविधता दे सका है, उसके चरित्र-चित्रण की सीमाएं क्या हैं? उसके पात्रों में कितना विस्तार और कितनी गहराई है? इस प्रकार उपन्यासकार की पात्र सृष्टि स्वाभाविक, यथार्थ, सजीव और मनोवैज्ञानिक होनी चाहिए।

चरित्र-चित्रण में उपन्यासकार उस प्रभाव को ही अंकित नहीं करता जो बाह्य परिस्थितियों के द्वारा पात्रों पर पड़ता है, प्रत्युत वह पात्रों के अंतर्द्वन्द्व का भी चित्रण करता है। आजकल उपन्यास में इस प्रकार के अंतर्द्वन्द्व को ही महत्व दिया जाता है। उपन्यास में चरित्रों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जाता है –

1. वर्गगत और व्यक्तिगत पात्र – उदाहरण के लिए गोदान में रायसाहब और अज्ञेय का शेखर वर्गगत एवं व्यक्तिगत पत्र है।
2. आदर्श और यथार्थ चरित्र – आदर्श पात्र में गुणों की प्रधानता होती है जबकि यथार्थ पात्रों में अच्छाई-बुराई दोनों का समन्वय होता है।
3. स्थिर और गतिशील चरित्र - क्रमशः गोदान का होरी तथा सेवासदन का विनय गतिशील एवं स्थिर पात्र है।

किसी भी उपन्यास में सफल चरित्र-चित्रण के लिए मानव-स्वभाव का सामान्य ज्ञान, मनुष्य के अंतर्मन का परिचय, उसके भावों, विचारों, रागद्वेशों, अन्तःसंघर्षों की जानकारी के अतिरिक्त सहानुभूति, कल्पना-शक्ति तथा वर्ग-विशेष की जानकारी अपेक्षित है। घटनाओं और पात्रों के बीच तारतम्यता का होना भी आवश्यक है। घटनाएं ऊपर से थोपी या आकस्मिक प्रतीत न हों, पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं से उद्‌भूत होती प्रतीत हों और पात्र लेखक की कठपुतली-मात्र न होकर स्वतंत्र अस्तित्व वाले हों। परिस्थितियाँ पात्रों को एक विशिष्ट दिशा में उन्मुख होने की प्रेरणा दें, तो पात्र परिस्थितियों को बदलने में, घटनाओं को नया मोड़ देने में समर्थ हों; न तो घटनाएं और कार्य पात्र की प्रकृति और परिस्थिति के प्रतिकूल हों और न पात्र परिस्थितियों से अलिप्त तथा असामान्य प्रतीत हों।

कथोपकथन

उपन्यास में कथोपकथन से तात्पर्य है दो या दो से अधिक पात्रों का परस्पर वार्तालाप। कथोपकथन के प्रमुख उद्देश्य हैं- पात्रों का चरित्र-चित्रण, कथानक के प्रवाह में सहायता प्रदान करना तथा घटनाओं में तीव्र गति का संचार करना।

कथोपकथन जितने पात्रानुकूल, स्वाभाविक, अभिनयात्मक, संक्षिप्त, सरल एवं प्रभावी होंगे, घटनाओं एवं चरित्रों में उतनी ही सजीवता आएगी। चुस्त, चुटीले एवं प्रसंगानुकूल कथोपकथन से कृति में एक विशेष गरिमा का संचार होता है। लेखक का कौशल अन्य बातों में तो परखा ही जाता है, कथोपकथन में खास रूप से परखा जाता है।

यदि उपन्यास के कथोपकथन रोचक, स्वाभाविक, सहज, पात्र और परिस्थिति के अनुकूल हो तो उनसे उपन्यास में नाटक की सी विशदता, सजीवता और यथार्थता आ जाती है। किन्तु कथोपकथन का अधिकाधिक प्रयोग करने के स्थान पर विवेकपूर्ण एवं सोद्देश्य प्रयोग होना चाहिए। यदि लेखक में कुशल कथोपकथन-योजना की क्षमता है, तो वह विश्लेषण, मत प्रतिपादन तथा अपनी ओर से कार्य-कारण-मीमांसा का काम कथोपकथन से ही ले सकता है। कथोपकथन की भाषा ही पात्रानुकूल नहीं होनी चाहिए वरन उसका विषय भी पात्रों के मानसिक धरातल के अनुरूप होना वांछनीय है। लेखक कभी-कभी निजी सिद्धांतों के उद्घाटन और गूढ़ तथा विशेष ज्ञान के प्रदर्शन का मोह संवरण नहीं कर सकते हैं। उन सिद्धांतों के उद्घाटन के लिए वैसे ही पात्रों की श्रृष्टि होनी चाहिए।

देशकाल-वातावरण

उपन्यास में देशकाल- वातावरण अथवा युग-धर्म की सजीवता भी आवश्यक है। इसी कारण लेखक अपने उपन्यास में युग विशेष और देश विशेष की सामाजिक स्थिति, रीति-रिवाज, आचार-विचार, संस्कृति, सभ्यता और विचारधारा पर प्रकाश डालता है, जिससे उसका उपन्यास वास्तविक और सजीव बन जाए। पात्रों के कथन, क्रिया-कलाप, वेश-भूषा, खान-पान, आचार-विचार सबमें युगधर्म की स्वाभाविकता झलकनी चाहिए। वृन्दावन लाल वर्मा के ऐतिहासिक उपन्यास और प्रेमचंद के सामाजिक उपन्यास युगधर्म की सजीव झाँकियाँ प्रस्तुत करते हैं।

वस्तुतः उपन्यास मानव-जीवन का चित्रण है जिसमें प्रधानतः मनुष्य के चरित्र का सजीव वर्णन रहता है। निश्चय है कि मनुष्य का सम्बन्ध अपने युग, समाज, देश और परिस्थितियों से रहता है अथवा मानव के चारित्र्य की पृष्ठभूमि में देश-काल का चित्रण उसका आवश्यक अंग है। जितनी ही वास्तविक पृष्ठभूमि में चरित्रों को प्रकट किया जायेगा, उतनी ही गहरी विश्वसनीयता का भाव जगाया जा

सकता है। इस पृष्ठभूमि के बिना हमारी कल्पना को ठहरने की कोई भूमि नहीं मिलती और न हमारी भावना ही रमती और विश्वास करती है।

परिस्थिति अथवा पृष्ठभूमि का चित्रण दो रूपों में होता है – एक तो समान और अनुकूल रूप में, दूसरे चरित्रों के लिए विषम और प्रतिकूल रूप में। पात्रों और उद्देश्य के अनुरूप उपन्यासकार दोनों ही स्थितियों का चित्रण कर हमारी कल्पना और अनुभूति को सजग करता है। सामाजिक उपन्यासों में तो लेखक प्रायः अपने युग की देखी-सुनी और अनुभूत पृष्ठभूमि देता है और पाठक के समसामयिक होने के कारण उसको जांचने और विश्वास करने का अवसर रहता है। आगामी युगों के पाठक के लिए तो सामाजिक उपन्यासकार सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास की सामग्री प्रदान करता है। अतः मेरा तो विश्वास यह है कि यदि उपन्यासकार अपने समाज का अत्यंत यथार्थ - यहाँ तक कि ऐतिहासिक यथार्तता को ध्यान में रखकर वास्तविक जीवन का चित्रण करता है, तो वह न केवल साहित्य की सृष्टि करता है, वरन सांस्कृतिक और सामाजिक इतिहास के लिए भी सामग्री तैयार करता है या पृष्ठभूमि बनता है। सामाजिक उपन्यासकार की अपेक्षा अधिक कठिनाई ऐतिहासिक उपन्यासकार की युग की पृष्ठभूमि का चित्रण करने में उपस्थित होती है।

इस तरह कथानक को वास्तविकता का आभास देने के साधनों में वातावरण मुख्य है। उसके लिए स्थानीय ज्ञान अत्यंत आवश्यक होता है। वर्णन में देश विरुद्धता और कल-विरुद्धता के दोष नहीं आने चाहिए। देश-काल-चित्रण का वास्तविक उद्देश्य कथानक और चरित्र का स्पष्टीकरण है। अतः उसे इसका साधन ही होना चाहिए, स्वयंसाध्य न बन जाना चाहिए। प्राकृतिक दृश्यों का संयोजन यथार्थता का भी आभास देता है और भावों को उद्दीप्त भी करता है। अतः स्थानिक विशेषताओं का ध्यान रखते हुए प्रकृति की भावानुकूल पृष्ठभूमि देना उपन्यास की रोचकता की वृद्धि में सहायक होता है।

चित्र: जैनेन्द्र कुमार

साभार :
https://www.google.co.in/search?q=godaan&biw=1024&bih=673&tbm=isch&source=lnms&sa=X&ei=3CLYVM7sKoPTmAWv1oK4Aw&ved=0CAYQ_AUoAQ#tbm=isch&q=%E0%A4%9C%E0%A5%88%E0%A4%A8%E0%A5%87%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%B0+%E0%A4%95%E0%A5%81%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%B0+&imgdii=_&imgrc=GgtOMkKKY-50XM%253A%3BYo3wHZuZzV3FVM%3Bhttp%253A%252F%252Fwww.abhivyakti-hindi.org%252Flekhak%252Fj%252Fimages%252Fjainendra.jpg%3Bhttp%253A%252F%252Fwww.abhivyakti-hindi.org%252Flekhak%252Fj%252Fjainendra_kumar.htm%3B150%3B200

भाषा-शैली

वस्तुतः उपन्यासकार भाषा-शैली के माध्यम से ही अपनी अनुभूतियों को अभिव्यंजित करता है। भाषा में सरलता, स्वाभाविकता, सजीवता, भावानुरुपता, प्रभावोत्पादकता, स्वाभाविक अलंकरण, लाक्षणिक और व्यंजक प्रयोग, मुहावरे, लोकोक्तियाँ आदि कलात्मक प्रयोग व भाषा-शैली, प्रत्यक्ष शैली, पत्र-शैली, पूर्व-दीप्ति शैली में से किसी एक शैली का प्रयोग कर सकता है।

जितनी स्वाभाविक अर्थात पात्रानुकूल और स्थिति के अनुरूप शैली होगी, उतना ही उसका प्रभाव पड़ेगा। उपन्यास की शैली संकेतात्मक न होकर विवृतात्मक होती है, क्योंकि उसे पूर्ण वातावरण और उसमें रस और भावों की सृष्टि करनी होती है। अतः पात्र की शिक्षा, संस्कृति और मानसिक धरातल के अनुरूप ही उसकी भाषा होनी चाहिए। इसके लिए पांडित्यपूर्ण, व्यंग्ययुक्त भाषा से लेकर ठेठ प्रादेशिक और ग्राम्य भाषा तक का प्रयोग यथावश्यक रूप में किया जाता है। शैली के सम्बन्ध में सामान्य-रूप से ये बातें ध्यान में रखने पर भी एक उपन्यासकार की शैली दूसरे से भिन्न होती है। प्रत्येक का अपना निजी अनुभव-क्षेत्र, वातावरण, संस्कार एवं शिक्षा होती है, अतः जीवन को देखने और उसको चित्रित करने के अपने निजी ढंग हैं। निजीपन के होते हुए भी, स्वाभाविकता और प्रभाव शैली की विशेषताएँ होनी चाहिए।

उद्देश्य

साहित्य की सभी विधाओं का उद्देश्य आनंद प्रदान करना है। उपन्यास भी उससे वंचित नहीं है। साहित्य आनंद प्रदान करता है किन्तु वह सस्ते मनोरंजन का साधन नहीं बन सकता। उपन्यासकार को अपने उद्देश्य की अभिव्यक्ति इस प्रकार करनी चाहिए कि वह उपदेशात्मक न दिखे। बल्कि पाठक अपनी बुद्धि एवं विवेक के अनुसार निष्कर्ष निकाले, उपन्यास का गठन इस प्रकार से होना चाहिए। उपन्यास के उद्देश्य के सन्दर्भ में प्रेमचंद ने कहा है कि –

"उपन्यास में युगीन समस्याओं का चित्रण करना ही मूल उद्देश्य होना चाहिए। जिससे मनुष्य की मौलिक प्रवृत्तियों का संघर्ष निभता दिखाई पड़ता है।" अतः मनुष्य के अनुभव की गहराई और उसे समृद्ध करने का सार्थक प्रयत्न किसी भी उपन्यास का सार्थक उद्देश्य माना गया है।

कहा जा सकता है कि उपर्युक्त सभी तत्वों के प्रयोग से ही उपन्यासकार अपने उद्देश्य में सफलता पा सकता है। निर्मल वर्मा के शब्दों में –

"उपन्यास का गठन लेखक तैयार नहीं करता, स्वयं उसकी दृष्टि उसे निर्धारित करती है – जैसे नदी पहले अपना पाट तैयार करके नहीं बहती, स्वयं बहने के दौरान उसका पाट बनता जाता है।"

चूँकि आधुनिकता बताती है कि अस्तित्व हमेशा संघर्ष से बनती है इसीलिए उपन्यासकार यह समझता है कि जीवन की वास्तविकता सनातन और शाश्वत भाव में नहीं अपितु संघर्ष करते हुए मूल्यों की रचना करने में है। अतः उपन्यास का यथार्थ के साथ अनिवार्य रिश्ता माना गया है। उपन्यास में व्यक्ति और समाज को जितनी सफलतापूर्वक चित्रित किया जाता है उतना किसी भी अन्य साहित्यिक विधा के द्वारा नहीं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी उपन्यास को अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई है। यही कारण है कि उपन्यास आधुनिक जीवन का महाकाव्य बन गया है।

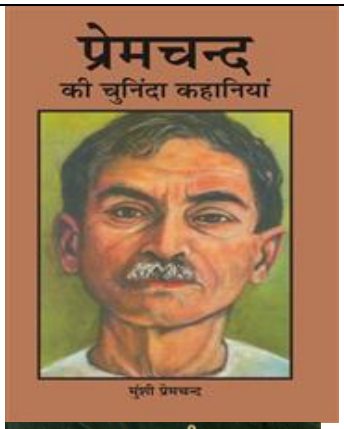

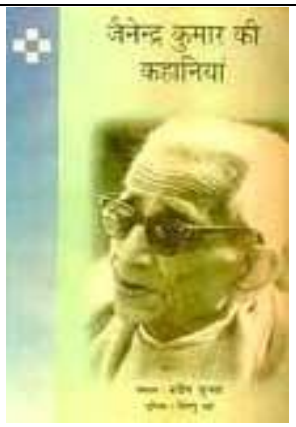

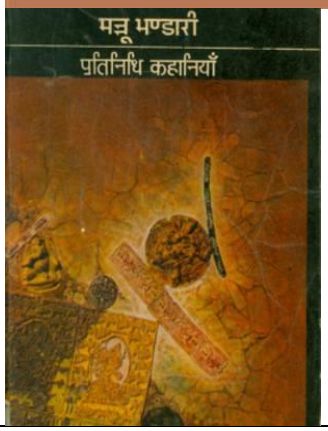

- **कहानी**

साहित्य जीवन का प्रतिबिम्ब है। जीवन के विविध व्यापार, क्रिया-कलाप एवं घात-प्रतिघात मानव हृदय को उद्वेलित करके जिन रागात्मक अनुभूतियों को जन्म देते हैं उन्हीं की शब्दार्थमयी अभिव्यक्ति साहित्य है। इस अभिव्यक्ति के अनेक रूप हैं जिनमें कहानी एक प्रमुख रूप है। दरअसल कहानी अत्यंत ही लोकप्रिय साहित्यिक विधा है। संसार भर के साहित्य में गीतों की तरह पुराना साहित्य कहानी का ही है। कहानियों को जन्म देनेवाली चेतना समय-समय पर बदलती रही है। यही कारण है कि समय-समय पर कहानी की संरचना और शैली में बदलाव आता रहा है। इसी बदलाव के कारण कहानी की परिभाषा भी समय-समय पर बदलती रही है। कहानी आकार में छोटी होते हुए भी किसी बड़े तथ्य का उद्घाटन करती है और जितना ही वह तथ्य व्यापक होता है उतनी ही वह कहानी उत्तम होती है।

संस्कृत साहित्य में मौजूद आख्यायिका या गल्प से अलग आधुनिक युग में कहानी के नाम से जिन रचनाओं का प्रादुर्भाव हुआ, वह अपने विषय, भाव, शैली सभी अर्थों में प्राचीन कथा से भिन्न रूप में विकसित हुई है। आधुनिक कहानी के जनक एडलर एलन पो के मत में –

"छोटी कहानी एक ऐसा आख्यान है, जो इतना छोटा है कि एक बैठक में पढ़ा जा सके और जो पाठक पर एक ही प्रभाव उत्पन्न करने के उद्देश्य से लिखा गया हो। वह स्वतः पूर्ण होती है।"

सर ह्यू वालपोल के अनुसार –

"कहानी, कहानी होनी चाहिए। वह घटना और आकस्मिकता से पूर्ण हो, उसमें छिप्र गति के साथ अप्रत्याशित विकास हो जो कौतूहल द्वारा चरमबिंदु और संतोषजनक अंत तक ले जाए।"

एलेरी के अनुसार –

"कहानी घुड़दौर के समान होती है। जिस प्रकार घुड़दौड़ का आदि और अंत महत्वपूर्ण होता है उसी प्रकार कहानी का आदि और अंत ही विशेष महत्व का होता है।"

प्रेमचंद के मतानुसार –

"कहानी (गल्प) एक रचना है, जिसमें जीवन के किसी एक अंग या मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उसके चरित्र, उसकी शैली तथा कथाविन्यास सब उसी एक भाव को पुष्ट करते हैं।"

आधुनिक कहानी के स्वरुप और ढांचे के साथ-साथ उसकी आलोचना पद्धति में भी निरंतर परिवर्तन देखे जा सकते हैं। पचास के दशक में नयी कविता की तर्ज पर नयी कहानी का प्रचलन हुआ। साठ के बाद की कहानियों में आधुनिकता-बोध की अजनबीयत और जनवादी मनोवृत्ति को देखा जा सकता है। मोहभंग के परिप्रेक्ष्य में तब जबकि भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, मूल्यहीनता आदि ने लोगों के सपनों को नष्ट करना प्रारंभ कर दिया, लोकतान्त्रिक व्यवस्था से जगी आशाएं व्यर्थ लगने लगीं, मध्यवर्ग की पीड़ा ने कहानी को नया स्वरुप दिया। कहानियों में व्यंग्य एक प्रमुख शास्त्र बन गई। इस नयी तरह की कहानी में स्त्री और प्रेम विषयक बिन्दुओं को अपने भीतर समेटा जाने लगा।

नई कहानी की आलोचना पद्धति में भी पर्याप्त अंतर आ गया। शिल्प ही केवल कहानी के मूल्यांकन का आधार नहीं रह गया, बल्कि उसकी सार्थकता भी मायने रखने लगी। नामवर सिंह के अनुसार आज किसी कहानी का शिल्प की दृष्टि से सफल होना ही काफी नहीं है, बल्कि वर्त्तमान वास्तविकता के सम्मुख उसकी सार्थकता भी परखी जानी चाहिए। उनके अनुसार कविता में जो स्थान लय का है, कहानी में वही स्थान कहानीपन का है। कविता चाहे जिस हद तक उन्मुक्त हो जाए, लेकिन वह लयमुक्त नहीं हो सकती। लयमुक्त रचना काव्य होते भी कविता नहीं कहलाएगी। कहानीपन से रहित गद्य रचनाओं के बारे में भी यही बात लागू होती है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि कहानी साहित्य का वह गद्यात्मक रचना प्रकार है जो जीवन स्थितियों के प्रतिबिम्ब आख्यानात्मक शैली में प्रस्तुत करके श्रोता अथवा पाठक की प्रत्यक्ष संवेदना को जगाने का प्रयत्न करता है। कहानी की विशेषता यह है कि यह पुरानी होते हुए भी बूढ़ी नहीं होती। इसलिए वह अपने को सतत नवीन और स्फूर्तिशील बनाए रखती है।

- **कहानी के तत्त्व**

कथावस्तु

कहानी का निर्माण कथावस्तु के ढ़ांचे पर ही होता है। कहानी की कथावस्तु संक्षिप्त होने के साथ-साथ यथासंभव भावपूर्ण, स्वतःपूर्ण तथा सुगठित होनी चाहिए। कथानक में यही शर्त है कि वह जीवन के किसी दंश, कुंठा, घुटन या अंतर्द्वंद्व का उद्घाटन करता है। वह सहज, संभव एवं विश्वसनीय हो। इसी के साथ घटनाओं का परस्पर सम्बद्ध होना भी आवश्यक है। उनका तारतम्य ऐसा हो कि वे एक कौतूहल की श्रृंखला में बंधी हुई आगे बढ़ती चली जाएँ और ऐसा भी न मालूम हो कि वे जबरदस्ती ढकेल दी गई हैं। कहानी का कथानक आरम्भ होकर प्रायः किसी न किसी प्रकार के संघर्ष द्वारा क्रमशः उत्थान को प्राप्त होता हुआ चरम को पहुंचता है, वहाँ पर कौतूहल का कुछ चमत्कारिक और कुछ-कुछ अप्रत्याशित ढंग से अंत हो जाता है। इसके पश्चात कहानी का परिणाम या अंत आता है, जिसमें पूरे तथ्य का उद्घाटन हो जाता है।

कहानी के आरम्भ में अंत का थोड़ा-सा संकेत रहना वांछनीय रहता है, जिससे अंत अप्रत्याशित होते हुए भी नितांत आकस्मिक न लगे। आजकल कथावस्तु की बहुत उपेक्षा की जाती है जो सर्वथा अनुचित है। कहानी मूलतः कथा है। उसमें कथावस्तु अल्प हो सकती है किन्तु कथावस्तु के सर्वथा अभाव से तो कहानी का अस्तित्व ही नहीं रहेगा।

चरित्र-चित्रण

पात्रों के माध्यम से किसी भाव, घटना या दृश्य का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। अतः पात्र अथवा चरित्र का कहानी में अत्यंत महत्व होता है। चरित्र-चित्रण का सम्बन्ध पात्रों से है। कहानी में पात्रों की संख्या न्यूनातिन्यून होती है। कहानी में पात्रों के चरित्र का पूर्ण विकासक्रम नहीं दिखाया जाता वरन प्रायः बने-बनाए चरित्र के ऐसे अंश पर प्रकाश डाला जाता है जिसमें व्यक्ति का व्यक्तित्व झलक उठे। कहानी के पात्र चाहे कल्पना-लोक के हों या चाहे वास्तविक संसार के, वे सजीव और व्यक्तित्वपूर्ण होने चाहिए। लेखक पात्र को व्यक्तित्व प्रदान करता है, बिना पर्याप्त कारणों के उसे बदलता नहीं है और पात्र एक बार कल्पना-लोक में जन्म लेकर अपने व्यक्तित्व के अनुकूल ही कार्यकलाप करते हैं। प्रेमचंद से पूर्व कहानियों में पात्रों का कोई महत्व नहीं था। कहानियाँ केवल कथ्य एवं घटना पर आधारित होती थी। प्रेमचंद के समय में पात्रों का भी महत्व स्वीकृत हुआ।

चित्र : संजीव

साभार:

https://www.google.co.in/search?q=godaan&biw=1024&bih=673&tbm=isch&source=lnms&sa=X&ei=3CLYVM7sKoPTmAWv1oK4Aw&ved=0CAYQ_AUoAQ#tbm=isch&q=%E0%A4%B8%E0%A4%82%E0%A4%9C%E0%A5%80%E0%A4%B5+&imgdii=_&imgrc=W9HMWwT0Sq7Y0M%253A%3BoWVcmLvOK8ds9M%3Bhttp%253A%252F%252Flekhakmanch.com%252Fwp-content%252Fuploads%252F2012%252F08%252FSanjeev.jpg%3Bhttp%253A%252F%252Flekhakmanch.com%252Ftag%252F%2525E0%2525A4%2525B8%2525E0%2525A4%252582%2525E0%2525A4%25259C%2525E0%2525A5%252580%2525E0%2525A4%2525B5%3B235%3B245

कथोपकथन

कहानी में कथोपकथन का महत्वपूर्ण स्थान होता है। कथोपकथन या वार्तालाप पात्रों के चरित्र के अनुकूल न हों तो हम पात्रों के चरित्र का मूल्यांकन करने में भूल कर जाएँगे। इसके द्वारा हमें न केवल पात्रों के चरित्र के विकास का ही ज्ञान मिलता है, प्रत्युत कथानक की रचना में भी इसका महत्वपूर्ण स्थान होता है। कथानक की सार्थकता इसमें है कि वह कथा-विकास में सहायक हो, चरित्रों पर प्रकाश डाले तथा कहानी की रोचकता में वृद्धि करे। कहानी के संवाद विशेषतः संक्षिप्त, चुस्त, सजीव, संगत, व्यंजनापूर्ण और प्रभावी तथा पात्र-परिस्थिति-प्रसंग के अनुकूल होने चाहिए। पात्रों की भाव-भंगिमाओं से युक्त संवाद शैली से कहानी में और भी सजीवता आ जाती है।

देशकाल-वातावरण

कहानी में वातावरण गौण रूप से आवश्यक है। पात्र अथवा कथ्य में सजीवता तथा प्रभाव उत्पन्न करने के लिए वातावरण एक शक्तिशाली साधन है। कहानी का कलेवर छोटा होता है, अतः वातावरण का अवकाश बहुत कम ही रहता है। फिर भी इसकी उपस्थिति सहायक है। वातावरण-प्रधान तथा ऐतिहासिक कहानियों में तो इसकी सजीवता का पूरा प्रयत्न करना चाहिए। वातावरण के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बात यह है कि वह कहानी के मूल-भाव के सर्वथा अनुकूल हो ताकि भावप्रेषण में सुगमता हो। प्रतिकूल एवं निर्जीव वातावरण कहानी को आहत और कुंठित कर देता है। प्रेमचंद की **'पूस की रात'** आदि कहानियां विशुद्ध रूप से वातावरण प्रधान हैं।

भाषा-शैली

कहानी में भाषा-शैली का बड़ा महत्व है। प्रायः पात्रों के अनुरूप भाषा का संयोजन किया जाता है। यदि पात्र ऐतिहासिक हैं तो उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ अथवा फारसीनिष्ठ होगी। किन्तु इसके विपरीत सामाजिक कहानियों की भाषा सामान्य बोलचाल की भाषा होगी। कहानी की शैली का सम्बन्ध कहानी के सभी तत्वों से होता है, इसके लिए उपयुक्त शब्द चयन आवश्यक है। शैली लेखक के

मानसिक व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। यह शब्दों और विचारों से प्रभावित होती है। शैली में लेखक की व्यक्तिगत विशिष्टता रहनी चाहिए। प्रेमचंद और प्रसाद अपनी-अपनी विशिष्ट शैलियों के निर्माता हैं।

उद्देश्य

साहित्य की अन्य विधाओं की भांति ही कहानी का भी एक निश्चित उद्देश्य या लक्ष्य होता है। इसका उद्देश्य जीवन संबंधी कुछ तथ्य देना या मानव-मन का निकट परिचय करना है, किन्तु वह उद्देश्य हितोपदेश की कहानियों की भांति व्यक्त नहीं किया जाता है। यह पाठक पर ही छोड़ दिया जाता है। कभी-कभी उद्देश्य अंतिम वाक्य में भी सुक्ति-रूप से रख दिया जाता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्रत्येक अच्छी कहानी में एक कथात्मक सूझबूझ होनी चाहिए, वह सूत्रबद्धता एक चरम बिंदु पर पहुंचकर परिणति अथवा अंत की ओर मुड़नी चाहिए तथा वह अंत इतना स्वाभाविक तथा मार्मिक होना चाहिए कि उसकी मार्मिकता पर किसी को संदेह न रह जाए। आचार्य सीताराम चतुर्वेदी के अनुसार –

"कहानी वह सुसंबद्ध, संक्षिप्त तथा पूर्ण रचना है जो कौशलपूर्ण रचना-शैली में, भावानुकूल भाषा-शैली में कही गयी हो और जो पाठक के मन पर एक प्रभाव डाले या जिसका एक परिणाम हो।" साथ ही कथा के चरित्र का चित्रण इस प्रकार होना चाहिए कि हमारे हृदय को छू सके, हमें प्रभावित कर सके, केवल वर्णित मूरत बनकर न रह जाए।"

- ## उपन्यास और कहानी में अंतर

उपन्यास और कहानी दोनों ही कथा तत्त्व प्रधान गद्य विधा है। प्रायः उपन्यास और कहानी के तत्त्व निर्धारण में विद्वानों ने एक ही पद्धति अपनाई है और छह तत्त्व निर्धारित किए हैं। परन्तु वास्तव में कहानी और उपन्यास दो स्वतंत्र विधाएँ हैं। निस्संदेह दोनों गद्य-विधाएँ हैं और दोनों के शिल्पगत उपकरण भी समान हैं, किन्तु दोनों के आकार, मूल, संवेदना, रचना-प्रक्रिया आदि में पर्याप्त अंतर होता है। दोनों की अपनी विशेषताएँ हैं जो कि एक दूसरे से पृथक करती हैं।

कहानी और उपन्यास में पहला भेद तो आकार का ही है। उपन्यास समाज की पृष्ठभूमि में किसी भी व्यक्ति के संपूर्ण जीवन का वर्णन करता है जबकि कहानी जीवन के किसी अवसर-विशेष का ही चित्र उपस्थित करती है। उपन्यास का क्षेत्र प्रायः वस्तु-वर्णन के ही अंतर्गत है जबकि कहानीकार अपनी आंतरिक भावनाओं को गीतिकाव्य की भांति नितांत व्यक्तिगत ढंग से ही व्यक्त कर सकता है अर्थात् कहानी में स्वानुभूति-चित्रण का उपन्यास से अधिक अवसर है।

उपन्यास प्रायः भावप्रधान नहीं होते किन्तु असंख्य कहानियाँ भावप्रधान होती हैं। दोनों की गति में भी पर्याप्त अंतर मिलता है। कहानी के विकास-क्रम की पांच अवस्थाएं मानी गई हैं – प्रारंभ, आरोह, चरमोत्कर्ष, अवरोह और अंत। कई कहानियाँ चरमोत्कर्ष पर ही समाप्त हो जाती हैं। उपन्यास के विकास-क्रम में इन अवस्थाओं का कोई महत्व नहीं होता है। वह संपूर्ण जीवन की व्याख्या के लिए एक से अधिक कथानकों का गुम्फन प्रस्तुत करता है। उपन्यास में कहानी की संख्या भी कहानी के पात्रों की संख्या से कई गुणा अधिक होती है। उपन्यासकार अपने सभी पात्रों के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष विधि द्वारा चित्रित करता है किन्तु कहानीकार कतिपय पात्रों की कतिपय विशेषताओं को ही अंकित करता है।

कहानी के संवाद उपकरण का उपयोग लम्बे-लम्बे भाषणों, दीर्घ तर्क-वितर्क को दृष्टि में रखकर नहीं किया जाता है। यह सभी कुछ उपन्यास में ही होता है। देशकाल वातावरण का महत्व कहानी की अपेक्षा उपन्यास में कहीं अधिक होता है। देशकाल या वातावरण का विषद चित्रण कहानी न तो में संभव है और न ही इसका अधिक उपयोग होता है। इस उपकरण का भी पूरा-पूरा उपयोग उपन्यास में ही होता है। उपन्यास जीवन-मीमांसा का अपना लक्ष्य बनाकर चलता है और उसमें मानव जीवन की विविध समस्याओं, चिंतन, दर्शन आदि का विवेचन किया जाता है, किन्तु कहानी एक ही निश्चित लक्ष्य की ओर अग्रसर होने वाली गद्य-विधा है। उसका ध्येय जीवन मीमांसा नहीं वरन लक्ष्य के प्रति एक दृष्टिकोण या उसका संकेतित परिचय देना है।

कुल मिलाकर उपन्यास का गौरव जीवन की समग्रता में है, कहानी का संक्षिप्तता में। कहानी में एकपन है – एक घटना, जीवन का एक पक्ष, संवेदना का एक बिंदु, एक भाव और एक उद्देश्य, जबकि उपन्यास में विविधता है, अनेकता है। उपन्यास में प्रासंगिक और सहयोगी कथाएँ मुख्य कथा को पुष्ट करती हैं। कहानी में प्रायः इसके लिए अवकाश नहीं होता। इसी तरह कहानी में पात्र सीमित होते हैं जबकि उपन्यास में अपेक्षाकृत अधिक। इस प्रकार ये दोनों स्वतंत्र एवं भिन्न और मौलिक विधाएं हैं। इन दोनों की शिल्प विधि एवं रूप-विधान में पर्याप्त विभिन्नता मिलती है।

- **निबंध**

आधुनिक युग में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास के परिणामस्वरूप मानव में बौद्धिकता एवं वस्तुओं के स्वरुप का तार्किकता के आधार पर निर्धारण करने की प्रवृत्ति बढ़ी है। इसके फलस्वरूप साहित्य में किसी विषय के स्वरुप, प्रकृति, गुण-दोष आदि का निरूपण बौद्धिक शैली में प्रस्तुत करने वाली विधा का उन्मेष हुआ है। निबंध भी इसी प्रकार की नव गद्यात्मक श्रव्य साहित्यिक विधा है जो मुख्यतः पश्चिम साहित्य की देन है। यह शब्द मूलतः संस्कृत का है जिसका अर्थ है बाँधना, संग्रह आदि।

अंग्रेजी में जिसे **'एसे'** कहा जाता है, हिंदी में उसे ही निबंध कहा जाता है। गद्य की अन्य कई विधाओं की भांति ही हिंदी में निबंध लेखन की शुरुआत पश्चिम के प्रभाव से हुई है। अंग्रेजी के **'एसे'** और हिंदी के निबंध में फर्क है। **'एसे'** शब्द का अर्थ है प्रयत्न, प्रयोग या परीक्षण, अर्थात प्रयत्नपूर्वक किसी एक विषय का परीक्षण कर, अपने विचारों को सुव्यस्थित रूप से अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया को **'एसे'** कहते हैं। जबकि निबंध का शाब्दिक अर्थ है बाँधना या रोकना। विचारों को बिखर जाने से रोकना या व्यवस्थित रूप से बांधकर विशिष्ट रूप देना निबंध का लक्षण कहा जा सकता है।

निबंध कथात्मक विधा नहीं है क्योंकि उसकी रचना का आधार कथा नहीं है। निबंध में लेखक अपना या दूसरे का जीवन-चरित्र प्रस्तुत नहीं करता, इसलिए वह जीवनी और आत्मकथा से भिन्न है। निबंध में लेखक अपनी स्मृतियों को भी नहीं रखता इसलिए वह संस्मरण से भी भिन्न है। इसी प्रकार वह रेखाचित्र तथा यात्रावृत से भी अलग है। तब प्रश्न यह है कि निबंध क्या है?

वस्तुतः साहित्य के बदलते स्वरुप का हमेशा प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष तरीकों से समाज के साथ सम्बन्ध रहा है। अतः युगानुरुप अनेक विद्वान एवं साहित्यकारों ने निबंध को अपने ढंग से समझाने का प्रयास किया है। मस्तिष्क की स्वच्छंदता एवं शास्त्रसम्मत व्यक्तित्व के योग को निबंध की कसौटी मानते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है कि –

"आधुनिक पाश्चात्य लक्षणों के अनुसार निबंध उसी को कहना चाहिए जिसमें व्यक्तिगत विशेषता हों तथा विचारों का समावेश टूस-टूस कर किया जाए। गद्य शैली का पूर्ण विकास निबंध में मिलता है इसलिए इसे गद्य की कसौटी कहना श्रेयस्कर होगा।"

बाबु गुलाब राय ने निबंध के लिए अनिवार्य सभी तत्वों को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि –

"निबंध वह गद्यात्मक रचना है जिसमें सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सौष्ठव एवं सजीवता आवश्यक संगति और सम्बद्धता के साथ किया गया हो।"

क्या आप जानते हैं ?

जिस निबंध से अंग्रेजी के 'एसे' का बोध होता है वह 'एसे' शब्द अंग्रेजी से फ्रेंच भाषा में आया। जिसे वहाँ 'एसाई' कहते थे, उसे अंग्रेजी में 'एसे' कहा गया। 'एसाई' का अंग्रेजी में अर्थ है 'प्रयत्न करना'। इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम एक विशिष्ट काव्य-विधा के लिए फ्रांसीसी विद्वान मोटेन ने किया और वस्तुतः उसकी रचनाएं 'प्रयत्न' की परंपरा में ही आती हैं। उसकी रचनाएं आत्मनिष्ठ हैं क्योंकि उसका दृष्टिकोण था, "मैं अपने 'एसेज' का विषय स्वयं हूँ क्योंकि मैं सबसे अधिक अपने को ही जनता हूँ।" अंग्रेजी में 'एसे' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग बेकन ने किया।

संक्षेप में कहें तो भावों एवं विचारों की प्रधानता तथा शैली की रमणीयता के योग से जिस नवीन साहित्य का प्रचलन हुआ उसे निबंध साहित्य की संज्ञा दी गई। विभिन्न विद्वानों अथवा आलोचकों की उपरोक्त परिभाषाओं से निबंध की निम्नलिखित विशेषताएं ध्यान में आती हैं -

1. निबंध एक गद्य रचना अथवा गद्य साहित्य विधा है।
2. निबंध एक छोटी आकार वाली रचना है। वह इतना बड़ा नहीं हो सकता कि प्रबंध बन जाए।
3. निबंध एक छोटी आकार वाली रचना है। इसमें विषय की एकता, मर्यादा, तारतम्यता, स्वतःपूर्ण संगठन एवं नियमितता आवश्यक है। इसमें विषयांतरण या विश्रृंखलता दोष माने जाते हैं।
4. निबंध में लेखक का व्यक्तित्व सजीव रूप में रहता है।
5. यद्यपि निबंध भाव-प्रधान भी होते हैं, पर साहित्य की सभी विधाओं में निबंध सर्वाधिक बुद्धिप्रधान या विचारोत्तेजक रचना होती है।
6. निबंध में शैली की रोचकता ही उसे साहित्य की विधा बनाती है। उसके अभाव में निबंध नीरस लेख ही रह जाता है।

यदि हम उपर्युक्त लक्षणों का समाहार करें तो निबंध की यह परिभाषा कर सकते हैं –

"निबंध किसी एक विषय पर ऐसी नियमित सीमित आकार की किन्तु सुगठित स्वतः पूर्ण रचना है जिसमें लेखक के निजी विचारों-भावों की बुद्धि-प्रेरक योजना और सरस प्रभावी शैली के कारण व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा रहती है।"

हिंदी के अनेक विद्वानों ने निबंध के वर्गीकरण की दिशा में प्रयत्न किये हैं। आचार्य शुक्ल ने निबंध के तीन वर्ग माने हैं- विचारात्मक, भावात्मक, वर्णनात्मक। शिवदान सिंह चौहान इसके केवल दो वर्ग मानते हैं-कलात्मक या ललित निबंध तथा तथ्यानिरुपक वस्तुनिष्ठ निबंध। बाबू गुलाब राय ने निबंध को चार वर्गों में बांटा है-वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक और भावात्मक। वहीं डॉ. ओंकारनाथ शर्मा ने आलोचनात्मक निबंधों का एक अलग वर्ग माना है।

- **निबंध के प्रकार**

विचारात्मक

इस तरह के निबंध में बुद्धि पक्ष प्रधान होता है और इसमें ऊहापोहमूलक चिंतन की प्रधानता होती है। लेखक तर्क का आश्रय लेता है। ये निबंध प्रायः गंभीर विषय पर लिखे जाते हैं और उनमें विषय की अनेकरूपता होती है। दर्शन, संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान, राजनीति, समाज-शास्त्र सभी विषयों पर विचारात्मक निबंध लिखे जाते हैं। विचारात्मक निबंध का लेखक कभी समास शैली अपनाता है तो कभी व्यास शैली। इस तरह के निबंधों में लेखक की गहन अन्तःदृष्टि, विचारों की नवीनता और विश्लेषण की क्षमता का परिचय मिलता है। विचारात्मक निबंध में भावों की उपेक्षा नहीं होती बल्कि भाव विचारों के अनुवर्ती बनकर ही उपस्थित होते हैं। शुक्ल जी के मनोभावों समबन्धी निबंधों में उनकी चिन्तनशीलता का परिचय मिलता है, लेकिन वहाँ भावों की उपेक्षा भी नहीं है। विचारात्मक निबंधों का आदर्श बताते हुए शुक्ल जी लिखते हैं – शुद्ध विचारात्मक निबंधों का चरम उत्कर्ष वहीं कहा जा सकता है जहाँ एक-एक पैराग्राफ में विचार दबा-दबाकर कसे गए हों और एक-एक वाक्य किसी विचार-खंड को लिए हुए हों।

चित्र : आचार्य रामचंद्र शुक्ल

साभार: :

https://www.google.co.in/search?q=godaan&biw=1024&bih=673&tbm=isch&source=lnms&sa=X&ei=3CLYVM7sKoPTmAWv1oK4Aw&ved=0CAYQ_AUoAQ#tbm=isch&q=%E0%A4%B9%E0%A4%9C%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%80+%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%A6+%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%B5%E0%A5%87%E0%A4%A6%E0%A5%80+&imgdii=_&imgrc=SITR7_hU5-GFDM%253A%3BIDbjjAjAaXYXDM%3Bhttp%253A%252F%252F3.bp.blogspot.com%252F-JkxjMdhsNSs%252FUKXXwruPHVI%252FAAAAAAAAAGs%252FMGfJG9xuseg%252Fs1600%252Fhazariprasad%252Bdwivedi.png%3Bhttp%253A%252F%252Fprafullakolkhyan.blogspot.com%252F2012%252F10%252Fblog-post_6245.html%3B248%3B291

भावात्मक निबंध

विचारात्मक निबंधों में जहाँ बुद्धि की प्रधानता होती है वहीं भावात्मक निबंधों में रागात्मक तत्त्व की प्रधानता रहती है। इसमें विचारों की अपेक्षा लेखक अपने-हृदय स्थित भावों का चित्रण अधिक करता है। इन निबंधों में कलात्मकता भी अधिक होती है। लेखक उन्मुक्त और स्वच्छंद भाव से अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करता है, अतः इनकी शैली धारा-तरंग तथा विक्षेप शैली होती है। वैयक्तिक निबंध, ललित निबंध भी इसी वर्ग के अंतर्गत आते हैं। इस प्रकार के निबंध में लेखक भावों की ऐसी धारा बहा देता है कि पाठक डूबने-उतरने लगता है। यहाँ पाठक के सामने विषय पर ठहरकर सोचने का मौका नहीं होता बल्कि भावनाएं उसके हृदय को आंदोलित करती है। हिन्दी में इसका आरम्भ भारतेंदु हरिश्चंद्र के निबंधों से हुआ। यदि द्विवेदी-युग विचारात्मक निबंधों के लिए जाना जायेगा तो भारतेंदु-युग भावात्मक निबंधों के लिए। आधुनिक यग में भी वैयक्तिक निबंध कम ही लिखे गए हैं। इस दिशा में पं. शांतिप्रिय द्विवेदी, डॉ. गुलाब राय, विद्यानिवास मिश्र आदि की देन महत्वपूर्ण है।

वर्णनात्मक

इस प्रकार के निबंध में निरूपण एवं व्याख्या का प्राधान्य होता है। लेखक मस्तिष्क और तर्क का आश्रय नहीं लेता और कल्पना-तत्त्व प्रमुख रहता है। वर्णनात्मक निबंधों का विषय प्रायः कोई दृश्य, रमणीक स्थल, पर्व त्यौहार आदि होता है। वही निबंध सफल कहा जाएगा जो वर्ण्य विषय का सजीव चित्र उपस्थित कर देता है। यहाँ लेखक को अपनी निजी प्रतिक्रिया, अनुभव आदि प्रस्तुत करने का पूरा अवकाश रहता है, अतः इसमें लेखक की वैयक्तिकता पूर्ण रूप से मुखरित हो उठती है। अधिकतर इनमें व्यास-शैली का प्रयोग होता है।

विवरणात्मक निबंध

इसमें विषय का विचारात्मक निरूपण रहता है। वर्णनात्मक निबंधों की भांति इसमें भी कल्पना-तत्त्व की प्रधानता रहती है। वर्णनात्मक निबंध का सम्बन्ध यदि देश से है तो विवरणात्मक का काल से। प्रथम में वस्तु को स्थिर रूप में देखकर उसका वर्णन किया

जाता है, तो दूसरे में वस्तु को उसके गतिशील रूप में चित्रित किया जाता है। इसी कारण विवरणात्मक निबंध की तुलना चलचित्र से की गयी है। इसमें भी लेखक की वैयक्तिकता मुखर हो उठती है। वस्तुतः लेखक के व्यक्तित्व की छाप के अभाव में वर्णनात्मक और विवरणात्मक दोनों प्रकार के निबंध निबंध न रहकर लेख मात्र बन जाते हैं। विवरणात्मक निबंध की शैली भी व्यास शैली होती है।

चित्र: बाबु गुलाब राय

साभार :

https://www.google.co.in/search?q=godaan&biw=1024&bih=673&tbm=isch&source=lnms&sa=X&ei=3CLYVM7sKoPTmAWv1oK4Aw&ved=0CAYQ_AUoAQ#tbm=isch&q=%E0%A4%97%E0%A5%81%E0%A4%B2%E0%A4%BE%E0%A4%AC+%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AF+&imgdii=_&imgrc=bWSvQP0XOZlHoM%253A%3BmZGfxJL-6Pt9UM%3Bhttp%253A%252F%252Fbharatdiscovery.org%252Fw%252Fimages%252F7%252F7c%252FGulabrai.jpg%3Bhttp%253A%252F%252Fbharatdiscovery.org%252Findia%252F%2525E0%2525A4%2525AC%2525E0%2525A4%2525BE%2525E0%2525A4%2525AC%2525E0%2525A5%252582_%2525E0%2525A4%252597%2525E0%2525A5%252581%2525E0%2525A4%2525B2%2525E0%2525A4%2525BE%2525E0%2525A4%2525AC%2525E0%2525A4%2525B0%2525E0%2525A4%2525BE%2525E0%2525A4%2525AF%3B200%3B277

आलोचनात्मक निबंध

वस्तुतः यह विचारात्मक निबंध का ही एक भेद है क्योंकि इसमें भी विषय-गाम्भीर्य, ऊहापोहमूलक चिंतन, तर्क, विचार-परिधि आदि लक्षण पाए जाते हैं। अंतर केवल यह है कि जहाँ विचारात्मक निबंध का विषय कोई भी हो सकता है, वहाँ आलोचनात्मक निबंध का विषय साहित्य होता है। दूसरे जहाँ विचार का सम्बन्ध साधारण और व्यापक वृत्ति से होता है, वहाँ आलोचना का सम्बन्ध प्रस्तुत वस्तु के मूल्यांकन से होता है। इसमें विश्लेषण का भी प्राधान्य रहता है। हिंदी में आलोचनात्मक निबंध ही सर्वाधिक लिखे गए हैं और आज भी लिखे जा रहे हैं।

बाबु गुलाब राय ने इसी ओर संकेत करते हुए कहा है कि –

"हमारे लेखकों की रूचि सामाजिक और राजनीतिक विषयों की अपेक्षा आलोचनात्मक निबंधों की ओर अधिक है और इस विषय में कुछ गहराई तक भी पहुंचे हैं। इस गहराई के लिए हम गर्व कर सकते हैं।"

निबंध में तत्वों की प्रामाणिकता लेखक की भावानुभूति, साहित्य की उत्कृष्टता एवं परिस्थिति के अनुकूल उसकी मौलिकता के आधार पर निर्धारित होती है।

- **निबंध के तत्त्व**

विषय

निबंध किसी एक विषय अथवा विषयखंड पर लिखा जाता है। निबंधकार सामाजिक, वैज्ञानिक, दार्शनिक, आर्थिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, साहित्यिक आदि किसी भी एक विषय को अपना सकता है। परन्तु उस विषय की एक निश्चित एवं सीमित रुपरेखा होनी चाहिए।

निजी दृष्टिकोण

वस्तुतः निजीपन ही निबंध की मूल प्रेरणा है। किसी नूतन विचार अथवा नवदृष्टिकोण को प्रस्तुत करने की प्रबल इच्छा ही निबंधकार को निबंध लिखने की ओर प्रवृत्त करती है। सम्पूर्ण निबंध की पृष्ठभूमि में लेखक का निजी व्यक्तित्व, उसका अपना दृष्टिकोण मुखर होना चाहिए।

विचार-तत्त्व

विचार व बुद्धि तत्त्व जो साहित्य की सभी विधाओं का सामान्य तत्त्व है, अपेक्षाकृत निबंध में अधिक रहता है। विचारों की मौलिकता भी आवश्यक है। इसका अभिप्राय है कि लेखक के अपने अन्तःप्रयास से निकली हुई विचारधारा निबंधों में प्रकट होनी चाहिए।

भाव-तत्त्व

निबंध में लघु आकर के कारण भाव सीमित ही हो सकते हैं, उपन्यास-नाटक जैसा भाव-विस्तार उसमें संभव नहीं, पर भाव-गाम्भीर्य और भाव उदात्तता की जिसमें जितनी विशेषता होगी, उतना ही वह निबंध महान होगा। अतः मानवीय उदात्त भावों की रसानुभूति निबंध का अनिवार्य गुण है।

निश्चित और सुनियोजित बंध

लघु आकार में निबंध की निश्चित रचना होती है। इसी सुयोजना से निबंध में एक-सूत्रता और ध्येयता बनी रहती है। इसी से निबंध एक स्वतःपूर्ण रचना बनती है।

भाषा-शैली की विशिष्टता

'शैली ही व्यक्ति है' इस उक्ति के अनुरूप निबंधकार अपनी निजी शैली द्वारा निबंध में अपने व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा करते हैं। शैली की विशिष्टता से ही निबंध विशिष्ट होता है। एक ही विषय पर लिखे गए भिन्न-भिन्न निबंधकारों के निबंधों में वैशिष्ट्य उसके शैलियों द्वारा ही उत्पन्न होते हैं।

साहित्यिक भाषा-शैली

निबंध साधारण गद्य की अपेक्षा सरस एवं सजीव साहित्य गद्य शैली में रचा जाता है। भाषा-शैली के सभी गुण – सरलता, स्पष्टता, व्यावहारिकता, व्याकरणानुरुपता, परिष्कार, प्रवाह, कला-लाघव, अलंकार, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, हास्य-व्यंग्य आदि का यथासंभव प्रयोग निबंधकार की भाषा में होनी चाहिए। सारांश यह है कि निबंध की भाषा-शैली निर्दोष एवं प्रभावोत्पदक होनी चाहिए।

- ## निबंध का महत्व एवं उद्देश्य

साहित्य की सभी विधाओं की अपेक्षा निबंध का अपना विशेष स्थान व महत्व है। व्याख्या के साथ-साथ जीवन निर्माण तथा उन्नयन की दृष्टि से अन्य विधाओं की अपेक्षा निबंध अधिक महत्वपूर्ण है। चिंतन-मनन से युक्त समाज के तत्त्व जीवन की ठोस समस्याओं और गंभीर उलझनों का हल सबसे अधिक निबंध में ही संभव है। इस प्रकार निबंध का महत्व सर्वोपरि है।

साहित्य की सभी विधाओं का कुछ न कुछ उद्देश्य अवश्य होता है। निबंध में हृदय पक्ष की अपेक्षा बुद्धि पक्ष अधिक मुखरित होता है, इसलिए निबंध का मूल उद्देश्य विवेच्य विषय की सीमा में रहकर उसकी मूल संवेदना का उद्घाटन करना है। यह निबंधकार की प्रगाढ़ता एवं साहित्यिक दक्षता का भी मूल्यांकन करता है।

हम कह सकते हैं कि निबंध वह विधा है जिसकी रचना में क्रमशः सर्जनात्मकता, प्रेरणात्मकता आदि की सूक्तियों के सुसामंजस्य से आनंद, कर्म एवं ज्ञान का समन्वित रूप देखने को मिलता है।

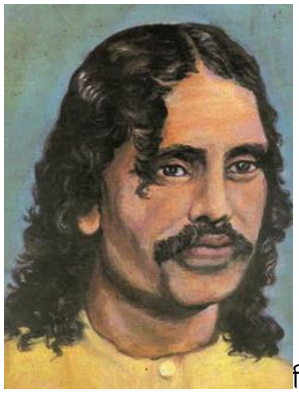चित्र : भारतेंदु हरुश्चंद्र

साभार :

https://www.google.co.in/search?q=godaan&biw=1024&bih=673&tbm=isch&source=lnms&sa=X&ei=3CLYVM7sKoPTmAWv1oK4Aw&ved=0CAYQ_AUoAQ#tbm=isch&q=%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4%E0%A5%87%E0%A4%82%E0%A4%A6%E0%A5%81+&imgdii=_&imgrc=PCXjXYZNvhXmIM%253A%3BzmzyUcf82jog-M%3Bhttp%253A%252F%252F1.bp.blogspot.com%252F-KpYaaGhme3w%252FUEyjA3y1lrI%252FAAAAAAAADOM%252FBfczmH3nQ44%252Fs1600%252FBartendu-Harish-Chandra.jpg%3Bhttp%253A%252F%252Fsamalochan.blogspot.com%252F2012%252F09%252Fblog-post_9.html%3B250%3B333

- **हिंदी निबंध का विकास**

वैसे तो हिंदी में निबंध लेखन की शुरुआत को लेकर थोड़ा-बहुत मतभेद कायम है, फिर भी हिंदी नाटकों की भांति ही निबंध की शुरुआत भी भारतेंदु युग से हुई मानी जाती है। आम तौर पर ऐसा माना जाता है कि हिंदी निबंध-लेखन की शुरुआत बालकृष्ण भट्ट के निबंधों से हुई है। भारतेंदु हरिश्चंद्र की पत्रिका **'कवि-वचन-सुधा'**
के प्रकाशन ने हिंदी में साहित्यिक लेखन को खास तौर पर प्रभावित किया। बाद में भारतेंदु के द्वारा शुरु की गई **'हरिश्चंद्र चन्द्रिका'** और **'बाल-बोधिनी'** तथा भारतेंदु युग के अन्य कई लेखकों द्वारा शुरु की गई अन्य अनेक पत्रिकाओं **'ब्राह्मण'** (प्रताप नारायण मिश्र), **'हिन्दी प्रदीप'** (बालकृष्ण भट्ट), आनंदकादम्बिनी (प्रेमघन) आदि के प्रभाव एवं प्रोत्साहन से उस युग में लिखे गए निबंध, हिंदी निबंध के प्रारंभिक निबंध हैं।

मुख्य तौर पर हम हिंदी निबंध के इतिहास को इस प्रकार बाँट सकते हैं –

1. **भारतेंदु-युग**
2. **द्विवेदी-युग**
3. **शुक्ल-युग (1920 से 1040)**
4. **शुक्लोत्तर-युग (1940 से आज तक)।**

- **भारतेंदु-युग**

भारतेंदु-युग के निबंधों की मूल प्रेरणा अपने समाज के नैतिक, सामाजिक और राजनीतिक उत्थान की चिंता थी, इसलिए इस युग के निबंधकारों ने समाज-सुधार, राष्ट्र-प्रेम, देशभक्ति, अतीत के प्रति गौरव-भावना, विदेशी शासन के प्रति आक्रोश आदि को अपने निबंधों का विषय बनाया है। यह आवश्यक है कि उस समय विदेशी शासन के विरुद्ध जन-संघर्ष अभी संगठित नहीं हुआ था। इसलिए

लेखकों ने अंग्रेजी सत्ता के प्रति भक्ति का भी प्रदर्शन किया है, लेकिन राष्ट्र के विकास की चिंता और उसके प्रति गहरा लगाव भी बराबर व्यक्त हुआ है। इस युग के निबंधकारों ने ऐसे विषयों को भी अपने लेखन के लिए चुना जिनमें उनकी जिन्दादिली और विनोदवृत्ति का परिचय मिलता है। इस युग के निबंधकारों ने गंभीर से गंभीर विषय को भी पूरी सजीवता और हास्य-विनोद के साथ प्रस्तुत किए। इस युग के निबंधों की मूल वृत्ति मनोविनोद की थी। गूढ़-विवेचन के अभाव के बावजूद उनके निबंधों से उनमें जीवन के प्रति गहरी अनुरक्ति का परिचय मिलता है। इस युग में भाषा को भले ही मानक रुप न मिल सका हो परन्तु निबंधकारों ने अपने प्रभावशाली ढंग और लोकोक्तियों, मुहावरे आदि के प्रयोग से निबंधों की भाषा में जान डालने का सफल प्रयास किया। तत्सम, तद्भव शब्दों के साथ ही उर्दू के शब्दों का भी भरपूर उपयोग किया गया। कुछ निबंध तो उर्दू शैली में ही लिखे गए।

इस युग के प्रमुख निबंधकार के रूप में भारतेंदु हरिश्चंद्र के अतिरिक्त प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बदरीनारायण चौधरी **'प्रेमघन'**, लाला श्रीनिवास दास, अम्बिकादास व्यास, बालमुकुन्द गुप्त, जगमोहन सिंह, राधाचरण गोस्वामी आदि प्रतिष्ठित हैं।

- **द्विवेदी-युग**

यह युग भाषा के परिमार्जन का युग था। इस युग को हिंदी निबंध के उत्थान की दृष्टि से अत्यंत ही महत्व प्राप्त है। 1903 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने **'सरस्वती'** के माध्यम से हिन्दी भाषा और साहित्य को प्रौढ़ता एवं नवीनता प्रदान की। उन्होंने भाषा के शुद्ध और व्याकरण-सम्मत रूप पर बल दिया। इस समय निबंध का विषय समाज, राजनीति तथा चटपटेपन तक सीमित न रहा। द्विवेदीजी ने **'सरस्वती'** में *"अनेक प्रकार के उपयोगी, ज्ञान-विषयक, ऐतिहासिक, पुरातत्व तथा समीक्षा संबंधी निबंध और लेख लिखे। उन्होंने गद्य की अनेक शैलियों का प्रवर्तन तथा भाषा का संस्कार किया। अंग्रेजी के निबंधकार 'बेकन' के निबंधों का अनुवाद भी 'बेकन विचार रत्नावली' के नाम से प्रस्तुत किया, जिससे हिंदी के अन्य लेखकों को निबंध लिखने की प्रेरणा मिली।"*

इस युग की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं ने भी इस युग में निबंधों के प्रकाशन में महत्वपूर्ण योगदान किया। **'नागरी प्रचारिणी पत्रिका', 'समालोचक', 'इंदु', 'मर्यादा', 'प्रभा',** आदि उनमें प्रमुख हैं। इस युग में राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रीय गौरव, विश्व-बंधुत्व, सामाजिक एकता, सांस्कृतिक जागरण की भावना आदि निबंधों की मूल भावना थी। बालमुकुन्द गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्यामसुन्दरदास, रामचंद्र शुक्ल, सरदार पूर्ण सिंह, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, माधव प्रसाद मिश्र आदि इस युग के प्रमुख निबंधकार हैं।

- **शुक्ल युग (1920 से 1940)**

हिंदी आलोचना के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य करने वाले आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने गद्य की भाषा को निखारने के साथ-साथ जटिल से जटिल विषय, और विचार को प्रस्तुत करने में सक्षम बनाने का उल्लेखनीय कार्य किया। आचार्य शुक्ल के निबंध के क्षेत्र में आने से निबंध-साहित्य में एक नया जीवन आया। शुक्ल युग का दौर ऐसा दौर था जब कविता और कथा साहित्य के क्षेत्र में भी काफी कार्य हो रहा था। कथा साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचंद और काव्य के क्षेत्र में प्रसाद, निराला, पन्त आदि कवि सक्रिय थे। इसका असर भी निबंध के क्षेत्र में हुआ।

शुक्ल जी के निबंध **'चिंतामणि'** में संगृहीत हैं। एक तो ऐसे निबंध हैं जो भावों के विश्लेषण से सम्बन्ध रखते हैं, परन्तु भाव-विषयक होते हुए भी ये निबंध भावात्मक नहीं हैं वरन उच्चकोटि के विचारात्मक निबंध हैं। दूसरे ऐसे निबंध हैं जो साहित्यिक हैं जिनमें कुछ सैद्धांतिक आलोचना और कुछ व्यावहारिक आलोचना से सम्बंधित हैं। शुक्ल जी के निबंधों में गंभीर चिंतन, सैद्धांतिक विवेचना और तर्कपूर्ण व्याख्या तो मिलती ही है साथ ही भावुक हृदय के दर्शन भी होते हैं।

इस युग के निबंधकारों में आचार्य शुक्ल के अतिरिक्त गुलाब राय, जयशंकर प्रसाद, पन्त, निराला, महादेवी वर्मा, नंददुलारे वाजपेयी, प्रेमचंद, राहुल संकृत्यायन, रमानाथ सुमन, माखनलाल चतुर्वेदी आदि प्रमुख हैं।

- **शुक्लोत्तर युग (1940 से आज तक)**

शुक्ल-युग के पश्चात हिंदी निबंध लेखन के क्षेत्र में अनेक प्रकार की शैलियों और परम्पराओं के दर्शन होते हैं। इनमें ललित और व्यंग्य शैली के निबंधों ने हिंदी निबंध को नया उत्कर्ष प्रदान किया। इसके अतिरिक इस दौर में अनेक वैचारिक निबंध भी लिखे गए। द्विवेदी युग और शुक्ल के निबंधों में वैयक्तिक स्पर्श का प्रायः अभाव रहा। छायावादी कवियों के निबंध वैयक्तिकता और तरलता से युक्त थे परन्तु भारतेंदु युग की जिन्दादिली और आत्मपरकता का अभाव ही था। शुक्लयुग के बाद के दौर में एक बार फिर वैयक्तिकता का समावेश हुआ। लेकिन यह वैयक्तिकता भावुकता से युक्त होने की जगह भाव एवं विचार के संतुलित रूप से युक्त था। इस दौर के निबंधकारों ने शुक्ल जी की परंपरा को आगे बढाते हुए गहन विश्लेषणात्मक निबंधों की रचना की। यही नहीं इन निबंधों में भारतेंदु युग के निबंधों के विशिष्ट गुणों – सामाजिक समस्याओं के प्रति सजगता और व्यंग्य विनोद को भी देखा जा सकता है।

कहा जा सकता है कि इस दौर के निबंधकारों ने अपनी अब तक की परंपरा को आत्मसात करते हुए आगे बढाया। इस युग के निबंधों की जिन तीन शैलियों का जिक्र ऊपर किया जा चुका है। वे हैं –

1. विचार प्रधान निबंध
2. ललित निबंध तथा
3. व्यंग्य निबंध।

- **विचार प्रधान निबंध**

शुक्ल जी हिंदी निबंध लेखन की परंपरा में विचार प्रधान लेखन के लिए सर्वाधिक प्रतिष्ठित निबंधकार हैं। उनके गंभीर, तर्कपूर्ण, बौद्धिक एवं आलोचनात्मक निबंधों में विचार ठूंस-ठूंस कर भरे हुए प्रतीत होते हैं। शुक्ल जी के बाद भी विचार प्रधान निबंधों की परंपरा को दूसरे निबंधकारों ने आगे बढाया। शुक्लोत्तर निबंधों में वैचारिक स्पष्टता और तर्कपूर्ण चिंतन के साथ विचारधारात्मक आग्रह भी परिलक्षित होते हैं। इन निबंधकारों ने समसामयिक निबंधों पर अनेक गंभीर एवं विचार प्रधान निबंध लिखे। डॉ. सम्पूर्णानन्द, जैनेन्द्र कुमार, रामविलास शर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, नगेन्द्र आदि निबंधकारों ने इस दिशा में उल्लेखनीय योगदान दिया।

हिंदी में विचार प्रधान निबंध लिखने वाले उपरोक्त निबंधकारों में सुप्रसिद्ध कथाकार जैनेन्द्र कुमार ने जहाँ सांस्कृतिक, नैतिक एवं राजनीतिक चिंतन को अपनी विशिष्ट विश्लेषणात्मक निबंधों के रूप में प्रस्तुत किया वहीं कई जगहों पर प्रश्नोत्तर और साक्षात्कार शैली को भी अपनाया। उनके निबंध अत्यंत ही रोचक होते हैं, हालाँकि कहीं-कहीं जटिलताओं एवं उलझाव को भी देखा जा सकता है। जैनेन्द्र कुमार के निबंध **'समय और हम'** में संकलित हैं। डॉ. सम्पूर्णानन्द के निबंधों में दार्शनिक विवेचन तो हैं ही जटिलता के दोष से मुक्त भी हैं। जहां तक रामविलास शर्मा के निबंधों का प्रश्न है तो उनमें शुक्ल और प्रेमचंद, दोनों की विशेषताएं एक साथ मौजूद हैं। सरल और सहज भाषा के साथ विश्लेषणात्मक पद्धति से लिखे गए उनके निबंध अत्यंत ही उत्कृष्ट कोटि के हैं। स्पष्टता, सरलता, दृढ़ता उनके निबंधों की खास विशेषता है। तीक्ष्ण व्यंग्य के साथ लिखे गए उनके निबंध भी महत्वपूर्ण हैं। राजनीतिक, सामाजिक विषयों के अतिरिक्त उन्होंने साहित्यिक विषयों पर भी अनेक आलोचनात्मक निबंध लिखे हैं। इसी प्रकार डॉ. नगेन्द्र ने भी अनेक साहित्यिक-आलोचनात्मक निबंधों की रचना की है। उन्होंने कुछ यात्रा संबंधी निबंध भी लिखे हैं। सुलझे हुए विचारक और गहरे विश्लेषक नगेन्द्र गहराई में पैठकर विश्लेषण करने के साथ साथ नयी उद्भावनों एवं विवेचनों से अपने निबंधों को विचारोत्तेजक बनाते हैं।

- **ललित निबंध**

ललित निबंध में शैली के उत्कर्ष अर्थात लालित्य पर खास जोर दिया जाता है। इसमें निबंधकार अपने भावों एवं विचारों को कुछ इस तरह प्रस्तुत करता है कि वह सरलता, अनुभूतिजन्यता, आत्मीयता एवं रोचकता से परिपूर्ण हों। जिसमें भाषिक शुष्कता की जगह कल्पनाशीलता, सरसता और सहजता का गुण हो। ललित निबंध की रचना करते समय निबन्धकार गहरे-गंभीर विश्लेषण, उबाऊ वर्णन एवं जटिल वाक्य रचना से परहेज बरतने की कोशिश करता है। ललित निबंध में निबंधकार के व्यक्तिवा की झांकी भी मिलती है। उसकी शैली उसके व्यक्तित्व को ही अभिव्यक्त करता है। लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं कि वह अपनी आत्मस्थापना का प्रयास करे।

हिन्दी निबंधकारों में ललित निबंधकार के रूप में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को सर्वाधिक प्रतिष्ठा प्राप्त है। उनके निबंधों में उनकी संवेदनशीलता और मानवतावादी दर्शन को स्पष्ट ही देखा जा सकता है। वे प्रकांड विद्वान थे और उनका अध्ययन क्षेत्र अत्यंत ही विस्तृत था। उन्होंने संस्कृत के प्राचीन साहित्य के साथ-साथ पालि, अपभ्रंश, बंगला आदि अनेक भाषा के साहित्य और हिंदी साहित्य का गहन अध्ययन किया था। इतिहास और मध्यकालीन हिंदी साहित्य पर विशेष पकड़ रखने वाले द्विवेदी जी की दृष्टि आधुनिक थी, इसलिए उनके निबंधों में पांडित्य के साथ-साथ नवीन चिंतन दृष्टि के भी दर्शन होते हैं। उनके निबंधों में भाषिक लचीलापन, और विपुल शब्द भण्डार के कारण भाषिक विविधता तथा देशज और संस्कृत के प्रचलित-अप्रचलित शब्दों का सामंजस्य भी देखा जा सकता है। उनकी भाषा के साथ-साथ उनका वाक्य-विन्यास भी लालित्यपूर्ण गद्य के अनुकूल है। **'अशोक के फूल', 'विचार और वितर्क', 'कल्पलता'** आदि उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं।

आचार्य द्विवेदी के अतिरिक्त विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, विवेकी राय आदि प्रमुख ललित निबंधकार हैं। विद्यानिवास जी के लोक साहित्य एवं लोक संस्कृतिपरक निबंधों में उनके पांडित्य के साथ ही लोक जीवन का आनंद मौजूद है। उनकी शैली काव्यमय एवं भावपूर्ण है जबकि भाषा अत्यंत ही सरस एवं काव्यपूर्ण। **'मेरे राम का मुकुट भीग रहा है'**, **'तुम चन्दन हम पानी'**, 'तमाल के झरोखे से' आदि उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह हैं।

- **व्यंग्य निबंध**

हिंदी में व्यंग्य निबंधों की परंपरा इसके प्रारंभ से ही देखी जा सकती है। हिंदी में व्यंग्य निबंधों की जो शुरुआत भारतेंदु युग में हुई वह आज भी जारी है। भारतेंदु युग में भारतेंदु के साथ ही प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, आदि ने कई महत्त्वपूर्ण व्यंग्य लिखे। आगे चलकर व्यंग्यपूर्ण निबंध लेखन की गति में थोडा ठहराव आ गया। शुक्ल, गुलाब राय, रामविलास शर्मा आदि के निबंधों में व्यंग्य का पुट विद्यमान रहा। स्वातंत्र्योत्तर निबंधों में व्यंग्य निबंध के एक नए युग की शुरुआत हुई। हरिशंकर परसाई को इस दृष्टि से बड़ा श्रेय प्राप्त है जिन्होंने व्यंग्य को एक स्वतंत्र विधा की तरह प्रतिष्ठित किया। व्यंग्य निबंध में अक्सर निबंधकार सामाजिक समस्या से सम्बंधित किसी विषय पर, उसकी गहराई में जाकर उसके अंतर्विरोधी पहलुओं को उद्घाटित करता है तथा ऐसे पहलुओं को सामने लाता है जो प्रायः हमारी नजरों से ओझल रहती हैं। वह उन अंतर्विरोधों को नई अर्थव्यंजना के साथ प्रस्तुत करता है। इसके लिए वह विशेष भाषा-शैली को अपनाता है जो विशेष भंगिमा से युक्त होती है।

अक्सर समसामयिक महत्व के विषयों पर लिखे गए व्यंग्य निबंधों से पाठकों को एक नई दृष्टि मिलती है तथा सामाजिक जागरूकता भी पैदा होती है। रुढ़िवाद, अन्धविश्वास आदि पर लिखे गए व्यंग्य निबंध से पाठकों को सामाजिक सोद्देश्यता का सन्देश भी मिलता है। समय के साथ व्यंग्य की लोकप्रियता बढ़ती गयी और समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं ने इसे स्थायी रूप में प्रकाशित करना प्रारंभ किया। स्वातंत्रयोत्तर हिंदी व्यंग्यकारों में हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, रवीन्द्रनाथ त्यागी, गोपाल प्रसाद व्यास, बरसानेलाल चतुर्वेदी आदि प्रमुख हैं।

कुल मिलाकर हिंदी निबंध लेखन की परंपरा अत्यंत ही समृद्ध है। हालाँकि इस दिशा में और भी प्रयास की आवश्यकता है। नयी पीढ़ी के लेखकों में ललित, भावात्मक, विचारात्मक निबंध लेखन के प्रति रुझान में कमी आयी है। फिर भी, आज भी समय-समय उत्कृष्ट निबंध लिखे और पढ़े जा रहे हैं।

स्व-मूल्यांकन प्रश्नमाला

बहुवैकल्पिक प्रश्न

1. गोदान के लेखक कौन हैं ?

(क) जैनेन्द्र कुमार (ख) निर्मल वर्मा (ग) **प्रेमचंद** (घ) इनमें से कोई नहीं।

2. इनमें से कौन सा निबंध विद्यानिवास मिश्र की रचना है?

(क) **मेरे राम का मुकुट भीग रहा है** (ख) कुटज (ग) करुणा (घ) अद्भुत अपूर्व स्वप्न।

3. 'भाव और मनोविकार' किस प्रकार का निबंध है ?

(क) ललित निबंध (ख) भावात्मक (ग) **विचारात्मक** (घ) इनमें से कोई नहीं।

4. प्रेमचंद की कहानियों के संकलन का क्या नाम है?

(क) सेवासदन (ख) शतराज के खिलाड़ी (ग) प्रेमाश्रम (घ) **मानसरोवर**।

5. 'चित्रलेखा' किस साहित्यिक विधा की रचना है ?

(क) कहानी (ख) निबंध (ग) **उपन्यास** (घ) संस्मरण ।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. **उपन्यास और कहानी की पारस्परिकता पर विचार कीजिए।**
2. **ललित निबंध पर टिप्पणी कीजिए।**
3. **कहानी में संवाद योजना के महत्व का परीक्षण कीजिए।**
4. **विचारात्मक निबंध की भाषा-शैली पर चर्चा कीजिए।**
5. **उपन्यास के महत्व को स्पष्ट कीजिए।**

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. **"मानव चरित्र पर प्रकाश डालना ही उपन्यास का मूल है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।**
2. **तत्वों के आधार पर कहानी की समीक्षा कीजिए।**
3. **'निबंध' की विभिन्न शैलियों का विवेचन कीजिए।**

4. कथा साहित्य में देशकाल वातावरण के महत्व पर प्रकाश डालिए।

सन्दर्भ-सूची

1. काव्य के रूप, गुलाब राय, आत्माराम एंड संस, दिल्ली।
2. काव्यशास्त्र, भगीरथ मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
3. भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र का संक्षिप्त विवेचन, सत्यदेव चौधरी, शांति स्वरुप गुप्त, अशोक प्रकाशन, दिल्ली।
4. हिंदी आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह।
5. हिंदी गद्य, विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी।
6. साहित्यालोचन, बलबीर कुंदरा, सतीश बुक डिपो, नई दिल्ली।
7. हिंदी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास, डॉ. (श्रीमती) ओम शुक्ल, अनुसन्धान प्रकाशन, कानपुर।
8. हिंदी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास, डॉ. (श्रीमती) ओम शुक्ल, अनुसन्धान प्रकाशन, कानपुर।
9. उपन्यास का शिल्प, गोपाल राय, बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी, पटना।